प्राचीन भारत में सिंचाई व्यवस्था : एक विश्लेषण

अश्वनी कुमार ● किशोर कुमार
इतिहास विभाग,कु.मा.रा.म.स्ना.महा. बादलपुर, गौतमबुद्ध नगर
Email: dr.kumarkishor@gmail.com

सारांश: मानव–समाज की प्रत्येक महत्वपूर्ण अवस्था ने नये संसाधनों को खोजा तथा उनका उपयोग किया और ऐसे व्यवहार को अपनाया जिसके द्वारा प्रकृति से प्राप्त संसाधनों का प्रयोग आसानी से हो सके। जल संसाधन भी उन्हीं में से एक है। मानव समाज का विकास, बहुत लंबे समय तक, जल की प्राकृतिक उपलब्धता पर आश्रित था। वस्तुतः जल एक विशिष्ट संसाधन है जो मानव समाज के इतिहास के अति प्रारम्भिक काल से ही मानव द्वारा प्रबंधित किया जाता रहा है। पीने के पानी तथा सिंचाई के लिए जल की आवश्यकता ने सदैव ही विकास की रूपरेखा तथा गति को निर्धारित किया है। नवपाषाण काल में कृषि की शुरूआत एक क्रांतिकारी घटना थी। गार्डन चाइल्ड ने अपनी पुस्तक मैन मैक्स हिमसेल्फ (1936) में कहाँ ''आग जलाने के कला सीखने के बाद भोजन–उत्पादन मानव इतिहास की सबसे बड़ी आर्थिक क्रांति थी।'' इसी आर्थिक क्रांति से सिंचाई का विकास आरम्भ हुआ।

सिंचाई जल को कृत्रिम रूप से मिट्टी तक पहुँचाने की विधि है जो अनाज की पैदावार को गुणात्मक स्तर तक बढ़ा देती है। इसी पैदावार के आधार पर सभ्यता या राष्ट्र की सामाजिक–आर्थिक वृद्धि तय होती है। मानव ने निरंतर सिंचाई को संवर्धित करके हजारों सालों तक अपना विकास किया है। हालांकि मानव समाज को विकसित करने में सिंचाई का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। यद्यपि कुछ मूलभूत समस्याएँ भी पैदा हुई है जैसे जल भराव, भूमि में लवणता की अधिकता, सामाजिक आर्थिक विषमता आदि।

औद्योगिक क्रांति के बाद से होने वाले जल संसाधन के निरंतर दुरुपयोग के कारण जलापूर्ति की कमी वाली स्थिति आज हमारे सामने आ खड़ी हुई है। विश्व के कई क्षेत्र तथा भारत भी आज जल–अभाव की इस भीषण अवस्था से ग्रसित है। उदाहरण के तौर पर साउथ अफ्रीका की सरकार ने केपटाउन जैसे शहरों की जल उपयोग क्षमता मात्र 25 लीटर प्रति व्यक्ति कर दी है। हमारे देश के कई क्षेत्रों में भी जल की समस्या ने भयावह रूप धारण कर लिया है।

सिंचाई विकास के इतिहास को समझने के क्रम में उन परम्परागत विधियों को भी जान सकते हैं जो आज भी उतनी ही प्रासंगिक है जितनी प्राचीन काल में थी। जल संरक्षण की बहुत सी ऐसी विधियाँ है जो पुराने अनुभवों से प्राप्त की जा सकती है। अतः इस पेपर में प्राचीन काल में सिंचाई विकास के इतिहास के साथ–साथ कुछ सिंचाई विधियों पर भी चर्चा की जाएगी जो आज भी प्रासंगिक है जिससे पता चलता है कि हमारे पूर्वज जल संरक्षण को लेकर कितने संवेदनशील थे।

1. विश्व में सिंचाई विकास का इतिहास

पुरातत्ववेत्ताओं ने छठी सहस्राब्दी ई.पू. में मेसोपोटामिया और मिस्र में सिंचाई के साक्ष्यों की पहचान की जहाँ जौ की खेती की गई थी। ऐसी फसल को पैदा करने में क्षेत्र में प्राकृतिक वर्षा को अपर्याप्त माना गया इसलिए माना जाता है कि सिंचाई के माध्यम से ही खेती की गई थी।[i]

दक्षिणी अमेरिका में स्थित इंका सभ्यता की जाना घाटी में तीन सिंचाई नहरों की खोज की गई जो क्रमशः 4000 हजार ई.पू., 3000 हजार ई.पू. तथा 9 ई. सदी की है। ये नहरें नयी दुनिया के प्राथमिक (मानव निर्मित) सिंचाई दस्तावेज है।[ii] प्राचीन मिस्र फेरोह आमेनहेट प्प् ने 1800 ई.पू. में जल को संरक्षित

करने के लिए फेयल्म की प्राकृतिक झील को जलाशय के रूप में बनवाया ताकि नील के वार्षिक बाढ़ के पानी को संरक्षित करके सूखे मौसम में जल का प्रयोग किया जा सके।[iii]

प्राचीन फारस में कनाट विधि को विकसित किया गया जो 800 ई.पू. पुरानी है। रोचक तथ्य यह है कि यह विधि आज भी प्रयोग में लाई जाती है। यह विधि एशिया, विशेषतः मध्यपूर्व एशिया तथा उत्तरी अफ्रीका में पाई जा चुकी है। इस प्रणाली में उर्ध्वाधर कुओं का एक नेटवर्क होता है जिसमें जल नीचे उतरकर सामान्य सुरंग या पाइप में आ जाता है जो कुछ दूरी पर स्थित किसी जलाशय में एकत्र कर लिया जाता है[iv] जैसा कि चित्र में दिखाया गया है।

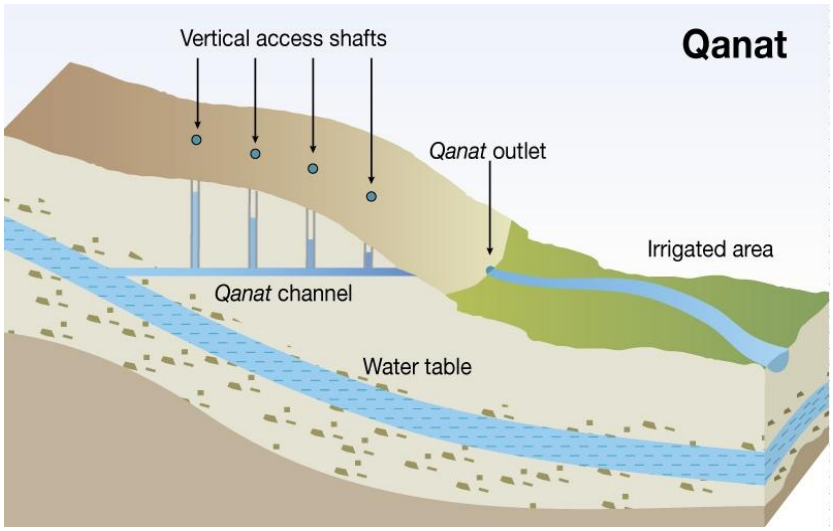

Source: https://en.wikipedia.org/wiki/Qanat

नोरिया जो परसियन व्हील के नाम से भी जाना जाता है, सर्वप्रथम रोमन लोगों ने उत्तरी अफ्रीका में 150 ई.पू. में प्रयोग किया था।[v] यह आज भी जहाँ तकनीकी तंत्र विकसित नहीं हो पाया है, में प्रयोग किया जाता है। प्राचीन श्रीलंका (300 ई.पू.) में सिंचाई के लिए किया गया कार्य अति सराहनीय एवम् जटिल था जो हजारों वर्षों तक विकसित होता रहा। सर्वप्रथम सिंहली लोगों द्वारा ही पूर्णतयाः कृत्रिम जलाशयों का निर्माण कराया गया। इस विधि को राजा प्रकर्मा भाहु के कार्यकाल (1153–1186 ईस्वी) में वृहद स्तर पर अपनाया गया।[vi] चीन के सिचुंआन क्षेत्र में (250 ई.पू.) दुजीग्यान सिंचाई व्यवस्था को अपनाया गया जो बड़े क्षेत्र को आज भी सिंचित करती हैं।[vii]

प्राचीन विश्व में क्षेत्रीय विशेषता आधारित सिंचाई विधियों को विकसित करके जल की महत्ता को सिद्ध किया गया। अतः प्राचीन विश्व यह बताने में सफल हो जाता है कि जल का समुचित प्रबंधन हमारे लिए कितना महत्वपूर्ण है और कैसे जल को संरक्षित करके विपरीत परिस्थितियों में अपने अस्तित्व को बनाए रखा।

2. प्राचीन भारत में सिंचाई विकास का इतिहास

भारतीय उपमहाद्वीप की प्रथम नगर सभ्यता ने जल को एक साधन के रूप में कुछ खास विशेषताओं को ध्यान में रखकर प्रयोग किया। सिंधु घाटी सभ्यता की जलवायु शुष्क एवम् अर्द्धशुष्क थी

इसलिए सभ्यता ने जल की भूमिका को भलीभाँति समझा। नदी की घाटियों में नहरें खोदकर पानी को खेतों तक पहुँचाया जाता था। इस तरह के नहर के चिह्न शोर्तघई के पास खोजे गए है जो कोरचा नदी से पानी खीचने के लिए बनाई गई थी।[viii] घौलावीरा शहर, जो चारों ओर से खारे पानी से घिरा था, ''समस्त निकासी की व्यवस्था इस तरह की गई है कि वर्षा की एक बूंद जो उस शहर पर गिरती है उसे परिश्रमपूर्वक संचित किया जा सके। उस क्षेत्र में जहाँ सतह पर स्थायी रूप से जल साधन का अभाव था जहाँ का भूमिगत जल अधिकतर खारा हो तथा सूखे पड़ने पर जल का सम्पूर्ण अभाव हो जाए, जल एक बहुमूल्य निधि हो जाती है।[ix] कुएँ भूमिगत जल के प्रयोग के सबसे आरम्भिक प्रमाण के रूप में है। नालियों के निर्माण में यह ध्यान रखा जाता था कि उसकी निकासी इस तरह हो कि कचरा स्वच्छ पानी के स्रोत को गंदा न कर सके।

वैदिक काल में कृषि प्रधान समाज में जल की महत्ता का बढ़ना स्वाभाविक था। ऋग्वेद में कृत्रिम जलमार्गों तथा खानित्रिमा का प्रसंग आता है। कदाचित ये सिंचाई के लिए जलवाहिकाओं के संदर्भ में प्रयोग किए गए हैं। इसके लिए सुशिरा तथा सूरमी शब्दों का भी प्रयोग किया गया है। कुएँ–अवत खोदे जाते थे और कुओं से पानी खीचने के प्रसाधनों का प्रयोग होता था जिन्हें अस्त्रकोश या अश्मचक्रम कहा गया है।[x]

प्राचीन साम्राज्य के संस्थापक मौर्य ने जल को एक साधन स्रोत के रूप में विशेष महत्ता थी। कौटिल्य के प्रमाण के आधार पर यह पता चलता है कि नदी पर बांधों द्वारा जलाशयों का निर्माण एक महत्वपूर्ण लोक कार्य था जो राजा द्वारा प्रोत्साहित किया जाता था। इसी प्रकार सम्राट अशोक की राजाज्ञाओं में कुओं का निर्माण तथा मुख्य मार्गों पर जल प्याऊ के निर्माण की बात मिलती है। शिलालेख प्रमाण के आधार पर गुजरात के जूनागढ़ राज्य में पुष्प गुप्ता जो चन्द्रगुप्त के काल में उस क्षेत्र का गवर्नर था, ने एक बड़ा जलाशय बनवाया जो नदी पर बांध बनाकर निर्मित कराया था, उस जलाशय का नाम सुदर्शन था। इस बांध का रखरखाव बाद तक होता रहा जबकि इसकी आखिरी मरम्मत 457/58 में गुप्त शासक स्कन्दगुप्त के काल में परणदत द्वारा करवायी गई।[xi]

दक्षिणी भारत में भी जल साधनों के उचित प्रयोग पर विशेष ध्यान दिया गया। छोटे व बड़े दोनों ही प्रकार के कुंडों की व्यवस्था थी तथा उनके रखरखाव पर प्राचीन काल से ही ध्यान दिया जाता रहा है। तंजौर क्षेत्र की भूमि की सिंचाई के लिए निर्मित प्रसिद्ध अनाईकतू बांध जो कावेरी नदी पर चोल राजाओं द्वारा बनवाया गया था, सिंचाई विकास की पराकाष्ठा का उदाहरण है। काकातीय राजाओं ने तीन बड़े बांध जो विदार के पास कमयाना में स्थित है, बनवाये तथा क्षेत्र में सिंचाई व्यवस्था की आपूर्ति सुनिश्चित की।

जूनागढ़ अभिलेख गुप्त कालीन सिंचाई का सर्वोत्तम उदाहरण है। सुदर्शन झील की मरम्मत इसी काल में हुई। रोचक तथ्य यह है कि मरम्मत शहर में जलभराव के कारण हुई थी ताकि नगरवासियों की सुरक्षा सुनिश्चित हो सके। अमरकोश से ज्ञात होता है कि गुप्तकाल में नदियों से नहरें निकाली जाती थी। अग्निपुराण के अनुसार सिंचाई के साधन जुटाना राजा के प्रमुख आठ कर्त्तव्यों में एक है।

हमारे देश में जल संसाधनों के प्रबन्धन का इतिहास बहुत पुराना है। इस प्रबन्धन में राज्य का हस्तक्षेप होता था लेकिन राज्य की आर्थिक सीमाओं के कारण यह वृहद स्तर पर कभी नहीं किया गया। अधिकतर सिंचाई का प्रबन्धन जनसहभागिता के द्वारा ही होता था।[xii] भिन्न–भिन्न क्षेत्रों में जल संरक्षण की भिन्न–भिन्न विधियाँ विकसित की गई।

3 जल संरक्षण की कुछ प्राचीन विधियाँ या प्रणालियाँ

जल संसाधनों से जुड़ा यह प्रबन्धन वर्ष के अधिकांश दिनों तक बर्फ से ढके लद्दाख से लेकर दक्षिण के पठार तथा थार के शुष्क मरुस्थल से लेकर अति वर्षा वाले उत्तरी पूर्वी क्षेत्र की विशिष्ट और स्थानीय परिस्थितियों के लिए उपयुक्त था। इन सभी स्थानों पर वहाँ की जलवायु व पानी अथवा बर्फ की उपलब्धता को दृष्टिगत रखते हुए जल संचय, उसके विस्तार और सिंचाई में उपयोग के तौर तरीके खोजे गए थे तथा समय की कसौटी पर खरी विधियाँ विकसित की गई थी।

जल संरक्षण के प्रमाण प्राचीन साहित्य, प्रलेखों, पुरातत्त्व अवशेषों तथा स्थानीय परम्परा से प्राप्त होते है। पानी का संरक्षण उन आवास स्थलों के लिए विशेष प्रमुखता रखता था जो जल स्रोतों से दूर होता था या वहाँ प्राकृतिक रूप से जल की कमी होती थी। बाढ़ के पानी का प्रयोग प्राचीन काल से ही किया गया है। इलाहाबाद के पास श्री नागवेरुपुर, जो गंगा के किनारे स्थित है, प्रमाण मिले है। मानसून के दौरान जल नदी में उफान आता था जिससे जल स्तर बढ़ जाता था। यह जल निकट में बनी कृत्रिम नहरों में भर जाता था। ये नहरें वहाँ के निवासियों द्वारा अतिरिक्त बाढ़ जल के संचय के लिए बनाई गई थी। यह जल कुओं में एकत्र होता था। नहरों से पानी सबसे पहले गाद वाले खाने में जाता था जहाँ पर उसमें व्याप्त मिट्टी बैठ जाती थी जो ईटों का बना होता था। इस प्रकार दूसरा कुंड होता था जिसमें साफ पानी मिल जाता था।[xiii]

वर्षा के जल संरक्षण का तरीका संबंधित क्षेत्रों की भू–आकृत्ति विशेषता के आधार पर भिन्न–भिन्न होता है। राजस्थान में घरों की छतों का तरीका जबकि दक्षिण भारत में कुंडो द्वारा जल संचय का तरीका था। राजस्थान में जल संचय का यह रचनात्मक कुंड कुंडी कतदला कहलाता है।[xiv]

कच्छ क्षेत्र में मालाधारी समुदायों द्वारा जल के संचय के लिए घरेलू विधि का प्रयोग व्यवहार में लाया गया। उन्हें यह बात अच्छी तरह मालूम थी कि स्वच्छ जल की मात्रा खारे पानी के अनुपात में कम है। अपने इस सैद्धान्तिक आधार पर वे भूमिगत खारे पानी पर वर्षा के जल को प्रवाहित कर संचित कर सके। यह विधि जल संरक्षण की टपटकन विधि कहलाती है।[xv]

अंडमान की जारवा जनजाति द्वारा जल एकत्रीकरण की बड़ी रोचक विधि का प्रयोग किया जाता है। यद्यपि अंडमान में सालाना वर्षा अधिक होती है लेकिन अपरिष्कृत भू–आकृति होने के कारण जल शीघ्र ही बह जाता है। जारवा जनजाति के लोग एक लंबा बड़ा बाँस लेकर उसे बीच से फाड़ लेती है तथा उसका एक किनारा ढलान से होकर गढ्ढे में रख दिया जाता है जिससे जल गढ्ढे में एकत्र हो जाता है जिसे जैक वेल ;श्रंबा ॅमससद्ध पद्धति कहते हैं। सिंचाई के लिए जल संरक्षण का एक बहुत ही उपयोगी तरीका राजस्थान के शुष्क इलाकों में पालीवाल ब्राह्मणों द्वारा विकसित किया गया। उनके द्वारा वर्षा के जल संचयन की ऐसी संरचना तैयार की गई थी जिसमें बहते पानी को रोकने का साधन हो ताकि उस विशेष स्थान की भूमि नम बनी रहें। भूमि के इस हिस्से को बाद में फसल उत्पादन के लिए प्रयोग में लाया जाता था। इस संरचना को खरीन कहते थे।[xvi]

वर्षा के जल संरक्षण की अन्य विधि हवेली कहलाती थी। यह विधि मध्यप्रदेश में प्रयोग में लाई जाती थी। इस प्रदेश की भूमि काली मिट्टी है जो काफी नमी वाली होती है। परन्तु जब यह सूखती है तो कड़ी होकर दरारे पड़ जाती है। इसके लिए वर्षा के पानी को बांध बनाकर रोक लिया जाता है। फसल

बोने के तुरंत बाद तटबंध पर बने रास्ते पानी को खोल दिया जाता है जिससे मिट्टी मुलायम हो जाती है जिसमें गेहूँ व चना की खेती आसानी से की जा सकती थी।[xvii]

जल संरक्षण की बहुत सी अन्य विधियाँ ओर भी है। महाराष्ट्र में बन्धारा और ताल, मध्यप्रदेश व उत्तरप्रदेश में बंधी, बिहार में आहर और पइन, हिमाचल में कुहल, तमिलनाडु में एरी, केरल में सुरगम, जम्मु कश्मीर में कांडी इलाके के पोखर और कर्नाटक में कट्टा आदि पानी को सहजने और एक से दूसरी जगह प्रवाहित करने के कुछ अति प्राचीन साधन थे, जो आज भी प्रचलन में है।

4 प्राचीन जल–संरक्षण प्रणालियों की प्रासंगिकता

पारम्परिक व्यवस्थाएँ उस क्षेत्र की पारिस्थितिकी और संस्कृति की विशिष्ट देन होती है, जिनमें उनका विकास होता है। वे न केवल काल की कसौटी पर खरी उतरी है, बल्कि उन्होंने स्थानीय जरूरतों को भी पर्यावरण में तालमेल रखते हुए पूरा किया है। आधुनिक व्यवस्थाएँ जहाँ पर्यावरण का दोहन करती है, उनके विपरीत प्राचीन व्यवस्थाएँ परिस्थितिकीय संरक्षण पर जोर देती है। पारम्परिक व्यवस्थाओं को अनन्त काल से साझा मानवीय अनुभवों से लाभ पहुँचता रहा है और यही उनकी सबसे बड़ी शक्ति है। समुदाय पर आधारित पारम्परिक प्रणालियाँ सामाजिक समरसता और आत्मनिर्भरता को भी बल देती है। इनमें फैसले करने का अधिकार प्रायः व्यक्तियों, समूह या स्थानीय समुदायों को दिया जाता था, जो साथ मिलकर काम कर रहे होते थे। इससे आर्थिक स्वतंत्रता बढ़ती थी और नीचे के स्तर पर स्थानीय संसाधनों का पूरा–पूरा इस्तेमाल होता था।

पारम्परिक प्रणालियों में सस्ती व आसान तकनीक का प्रयोग होता था जिसे स्थानीय लोग भी आसानी से कारगर बनाए रख सकते थे। आधुनिक प्रणालियों ने सामुदायिकता को तोड़ दिया और बाजार के सिद्धान्तों पर चलने वाली ये प्रणालियाँ वितरण के मोर्चे पर कच्ची साबित हुई। देश का बड़ा हिस्सा ऐसा भी था जहाँ आधुनिक प्रणालियाँ भारी लागत की वजह से पहुँच ही नहीं सकती। इसलिए पारम्परिक प्रणालियाँ और भी सार्थक तथा प्रासंगिक हो जाती है। जल आर्थिक विकास का मेरुदण्ड है। जल संसाधनों का यदि समतामूलक, समुदाय आधारित और विकास करना है तो पारम्परिक प्रणालियों को सशक्त बनाना होगा उनका विकास करना होगा।

5 आधुनिक चिंताएँ

औपनिवेशिक काल में बदले सामाजिक–आर्थिक ढाँचे में या तो ये प्रणालियाँ खो गई या फिर इनका चलन कम हो गया। आधुनिक काल में जल का क्षरण तेजी से हुआ है। भारत के कुछ क्षेत्रों में स्थिति इतनी भयावह है कि किसान सूखे की वजह से अपनी फसलें नहीं उपजा पाता रहा है जिसके कारण वह ऋण के चंगुल में फँस जाता है। अंत में उसे ऋण की कीमत अपनी जान देकर चुकानी पड़ती है। 21वीं सदी में जहाँ भारत ने अनेक क्षेत्रों में ऊचाइयाँ हासिल की है वही सूखे की वजह से किसानों की आत्महत्या भारत को सोचने पर मजबूर करती है। दूसरी और अन्य क्षेत्रों में बाढ़ का पानी रिहायशी इलाकों तथा खेतों में भर जाता है जिससे आर्थिक हानि तो होती ही है वही जन समूहों को पलायन भी करना पड़ता है।

तालाब आधारित सिंचित भूमि का क्षेत्र लगातार घट रहा है जो एक चिंतनीय बात है क्योंकि तालाब का पानी वर्षा के जल पर आधारित होता है यह जल संरक्षण का उत्तम तरीका है। दूसरी ओर भूमिगत जल आधारित सिंचित भूमि का क्षेत्र लगातार बढ़ रहा है। नलकूपों के माध्यम से जल को खेतों तक पहुँचाया जा

रहा है जिससे पानी ज्यादा बर्बाद होता है क्योंकि किसान आसानी से प्राप्त जल का अत्यधिक उपयोग कर रहे हैं। अत्यधिक जल प्रयोग से पंजाब क्षेत्र के भूमिगत जल स्तर में भारी गिरावट आई है। जैसा कि ग्राफ में दिखाया गया है।[xviii]

Year	Canal	Tank	Ground Water	Other	Net Irrigated Area	Gross Irrigated Area
1950-51	8.30	3.61	5.98	2.97	20.50	22.56
1960-61	10.37	4.56	7.29	2.44	24.66	27.98
1970-71	12.84	4.11	11.89	2.27	31.10	38.20
1980-81	15.29	3.18	17.70	2.55	37.72	49.78
1990-91	17.95	2.94	24.70	2.93	48.02	63.20
2002-03	16.34	2.26	34.50	2.73	55.85	78.33

6 निष्कर्ष

भारत में सिंचाई विकास के इतिहास से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि विपरीत परिस्थितियों में अलग–अलग क्षेत्रों में जल प्रबंधन की भिन्न–भिन्न प्रणालियाँ अपनाई गई इन प्रणालालियों के आधार पर मानव ने अपने पीने के पानी तथा सिंचाई के माध्यम से अपने को अक्षुण्ण बनाये रखा। चूँकि कुछ क्षेत्रों में जहाँ आधुनिक प्रणालियाँ भारी लागत की वजह से वहाँ पहुँच नहीं सकती वहाँ पारम्परिक प्रणाली की सार्थकता ओर भी बढ़ जाती है जो सरकार के प्रोत्साहन के बिना संभव नहीं है। बड़ी सिंचाई परियोजनाओं के साथ–साथ इन क्षेत्रीय प्रणालियों का पुनगर्ठन किया जाना अति आवश्यक है। यह कार्य जनसहभागिता के बिना संभव नहीं है।

दूसरी ओर जहाँ आधुनिक प्रणालियाँ विकसित हो गई है जैसे नहरें नलकूप आदि, वहाँ जल का सतत् रूप से उपयोग होना चाहिए। अन्यथा जल संरक्षण की यह समस्या विकराल रूप धारण कर सकती है। भूमिगत जल का स्तर कम होना एक गम्भीर समस्या है। हालांकि इस समस्या से निपटने के लिए सरकार माइक्रो–सिंचाई विधियों को प्रोत्साहित कर रही है। जैसे ड्रिप सिंचाई, स्प्रिक्चलर आदि फिर भी सरकार के लिए जल संसाधनों की सुरक्षा एक बड़ा मुद्दा होना चाहिए।

नदी जोड़ों कार्यक्रम के माध्यम से कुछ परियोजनाओं पर कार्य चल रहा है जो एक सराहनीय कदम है। अतः इतिहास से प्रेरणा लेते हुए भविष्य की ओर सकारात्मक कदमों के साथ निरंतर प्रयास किया जाना चाहिए ताकि जल की आपूर्ति मानव व कृषि के लिए निर्बाध रूप से बनी रहे।

जल हमारे लिए कितना आवश्यक है यह ऋग्वेद में स्पष्ट है। जल अभिव्यक्त है, जल ही शक्तिवर्धक है, यही जल वास्तव में अग्नि व सोम को सहायता देता है। हे प्रभु ऐसा जल जो मधुबूंद सा है जीवन की खास व ओज की साथ मुझे प्राप्त हो।

सन्दर्भ ग्रंथ

i Kang, S.T., Irrigation in Ancient Mesopotamia Water Resource Bulletin, 8(3): 619-624, (1972).

ii Dillehay, T.D., Eling H.H. Jr, Rossen J. "Preceramic Irrigation Canals in the Peruvian Andes". Proceedings of the National Academy of Science 102 (47): 17241-4. PMID 16284247, (2005).

[iii] Amenemhet III. Britannica Concise. Retrieved on 2007-01-10.

[iv] Qanat Irrigation Systems and Homegardens (Iran). Globally Important Agriculture Heritage Systems. UN Food and Agriculture Organization, Retrieved on 2007-01-10.

[v] Encyclopaedia Britannica, 1911 and 1989 Editions.

[vi] De Silva, Sena, Reservoirs of Sri Lanka and Their Fisheries, (1998).

[vii] China-History. Encyclopaedia Britannica, 1994 edition.

[viii] Irgan Habib, The Study of Civilization, National Book Trust, page 25 (2008).

[ix] J.P. Joshi, R.S. Bisth, India and Indus Civilization, National Museums Institute, New Delhi, page 31 (1994).

[x] जी.सी.पांडे, वैदिक संस्कृति, मोती लाल बनारसीदास प्रकाशन, (1990)।

[xi] डी.एन.झा. एवं कृष्ण मोहन श्रीमाली, प्राचीन भारत का इतिहास, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, पृ. 200, पुनर्मुद्रण अगस्त 2005-

[xii] इंडिया वाटर पोर्टल (हिन्दी)

[xiii] इग्नू नोटस, M.A., MHI-08, Chapter-12.

[xiv] वही।

[xv] इंडिया वाटर पोर्टल (हिन्दी)

[xvi] वही।

[xvii] इग्नू नोटस, M.A., MHI-08, Chapter-12.

[xviii] Narayanamoorthy, A Trends in Irrigated Area in India: 1950-51 to 2002.